# आलंकारिक दृष्टि से श्री उत्तराध्ययनसूत्र : एक चिन्तन

☐ मुनि प्रकाशचन्द्र 'निर्भय', एम. ए. साहित्य-रत्न

## प्रभु महावीर और उत्तराध्ययन-सूत्र

चार मूल सूत्रों में '**उत्तराध्ययनसूत्र**' का नाम आता है। इसको जैन परम्परा में प्रभु महावीर की अन्तिम देशना के रूप में स्वीकार किया गया है। फिर भी इस सूत्र के कुछ अध्ययनों को लेकर हल्का-सा मत-भेद उत्पन्न हुआ है कि वे अध्ययन प्रभु महावीर के निर्वाण के बाद प्रक्षिप्त किये गये हैं। जो भी हो हमें यहाँ इस बात की चर्चा इष्ट नहीं है। लेकिन यह सर्वमान्य तथ्य है कि इस सूत्र का स्थान बड़ा ही गौरवपूर्ण है। क्योंकि अन्य आगम सूत्रों की अपेक्षा इस सूत्र पर निर्युक्ति, चूर्णि, टीका, उपटीका, भाष्य एवं अनेक अनुवाद लिखे गये हैं विद्वदाचार्यों द्वारा! भद्रबाहु स्वामी द्वारा इस पर निर्युक्ति की रचना की गयी है। साथ ही इस सूत्र में चारों ही अनुयोगों—चरणकरणानुयोग, धर्मानुयोग, गणितानुयोग और द्रव्यानुयोग का वर्णन उपलब्ध होता है। इस दृष्टि से इस सूत्र का महत्त्व स्वयमेव प्रभासित है। यह सूत्र जीवन-दर्शन, अध्यात्म, धर्म, दर्शन; इतिहास, कथा आदि विविध विषयों का एक तरह से कोष है। यह सूत्र ऐसा एक सागर है जिसके भीतर अनमोल रत्न उपलब्ध हैं। चाहिये ऐसा बुद्धि का तिरैया, जो भीतर गहरा उतरे और रत्न ढूंढ लाये!

## प्रस्तुत निबंध की भावभूमि

यह सर्वमान्य बात है कि वीतराग-वाणी—आर्षवाणी आध्यात्मिक भावों को ही स्पष्ट करने वाली है। आर्ष वाणी अपनी तेजस्वी-ज्ञानधारा के साथ भव्यजीवों के हृदय को स्पर्श कर मिथ्यात्व की चट्टान को भेदने वाली है। अतः जो सीधे हृदय में उतरने वाली बात है उसका अपना विशिष्ट ही महत्त्व है।

आर्षवाणी आध्यात्म-वैभव से परिपूर्ण होती है। उसका एक-एक शब्द रूपी मोती बहुमूल्य तो क्या अनमोल होता है। क्योंकि उसकी कीमत आंकना ही मुश्किल है। तब उसकी महिमा गरिमा एवं भावना की बात ही क्या है?

आत्म-वैभव से परिपूर्णता के कारण इस सूत्र पर काफी लिखा गया है निबंधात्मक या शोध रूप से, जिन्होंने भी लिखा उन सभी ने प्रायः इसके आत्म-वैभव को लेकर ही लिखा है। जहाँ तक मेरे ध्यान में है, बात यह है कि इसके बाह्य कला वैभव पर बहुत कम लिखा गया है या नहीं ही लिखा गया है। यदि लिखा भी गया है तो मेरे ध्यान में नहीं है। साहित्य का विद्यार्थी होने के नाते मेरा ध्यान इसके कला-वैभव की ओर गया। तब मुझे ऐसा लगा कि इसके कला वैभव को स्पष्ट करना चाहिए। क्योंकि प्रायः जैन सूत्रों और ग्रन्थों को यह कह कर साहित्यिक

धम्मो दीवो
संसार समुद्र में
धर्म ही दीप है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जगत् के विद्वानों ने साहित्यिक जगत् से परे किया है कि इनमें आध्यात्मिक बातें ही हैं साहित्यिकता नहीं। किन्तु जब गहरी दृष्टि से मैंने इस सूत्र का अध्ययन किया तो मुझे इसमें साहित्यिकता भी मिली। वर्तमान में प्रचलित साहित्यिक-समीक्षा के मापदण्डों में कला पक्ष की प्रधानता प्रायः अधिक है। अतः अब हमें सूत्रों एवं ग्रन्थों का साहित्यिक महत्त्व साहित्य-जगत् के सामने रखना चाहिए। यह सूत्र भावपक्ष एवं कलापक्ष दोनों ही पक्षों में बड़े सशक्त एवं सामर्थ्य के साथ अपना स्थान रखता है।

बाह्य वैभव/कलापक्ष की समीक्षा प्रायः इन रूपों में की जाती है—रस, छन्द, अलंकार, भाषा, शैली, प्रतीक, विधान आदि।

ये सारे रूप मिलकर कलापक्ष-बाह्य वैभव की सर्जना करते हैं। सभी का अपना-अपना अलग-अलग महत्त्व है। किसी भी रूप की हम उपेक्षा नहीं कर सकते हैं।

प्रस्तुत निबंध सम्पूर्ण कलापक्ष के रूपों को लेकर प्रस्तुत नहीं है। किन्तु मात्र **'अलंकर-रूप'** को लेकर ही लिखा जा रहा है। अतः 'अलंकार-रूप' के अलावा शेष अन्य रूपों पर यहाँ विचार नहीं किया जाएगा!

## उत्तराध्ययनसूत्र और अलंकार

उत्तराध्ययन-सूत्र महाकाव्य नहीं है। वस्तुतः यह आर्ष-वाणी है।

अलंकार की दृष्टि से या भाषा वैभव की दृष्टि से यह सूत्र-बद्ध नहीं किया गया अपितु भाववैभव ही इसका प्रमुख आधार है। फिर भी जब अलंकार खोजने / शोधने की दृष्टि से इसका अवलोकन किया तो काफी बड़ी मात्रा में इसमें अलंकार मिले। यूं तो अलंकारों की संख्या सैकड़ों में मानी जाती है फिर भी यहाँ उन सभी अलंकारों की दृष्टि से शोधपूर्वक नहीं लिखा है। कुछ प्रमुख अलंकारों की ही शोध की है। वस्तुतः इसमें उपदेशात्मक, कथात्मक हिस्सा अधिक होने से उदाहरण अलंकार, दृष्टांत अलंकार प्रचुरता से मिले। साथ ही यमक, उपमा और रूपक तथा अन्य अलंकार भी इसमें काफी मिल सकते हैं। जहाँ तक मेरी दृष्टि गयी और जैसा अलंकार मुझे दिखा उसे ही यहाँ लिखा गया है। यह प्रथम प्रयास है कि जैन सूत्र पर अलंकार की दृष्टि से कुछ शोधपूर्वक लिखा जाए। अतः चाहिये जितनी प्रौढता इस निबंध में नहीं आ पाई फिर भी जैसा बन पाया, लिखा है।

अब क्रमशः ३६ ही अध्ययनों पर अलंकार अभिव्यक्त करने वाली गाथाएँ यहाँ पर प्रस्तुत हैं।

**अध्ययन १—गाथा ४-५-१२-३७**—इन गाथाओं में अविनीत शिष्य को क्रमशः **'जहाँ सुणी पूइ-कण्णी'**[४] सड़े कान की कुतिया, **'विट्ठं भुंजइ सूयरे**[५]**'** विष्ठाभोजी सूअर, **'गलियस्से'**[१२] गलिताश्व—अड़ियल अश्व का उदाहरण दिया गया है। तथा विनीत शिष्य को **'रमए पंडिए सासं, हयं भद्दं व वाहए'** गुरु पंडित शिष्यों पर शासन करता हुआ इस प्रकार से आनंद प्राप्त करता है जैसे उत्तम अश्व का शासन करने वाला वाहक! अतः उदाहरण और उपमा के साथ ही इन गाथाओं में पुरुषावृत्ति अलंकार भी है। साथ ही १२ वीं गाथा में **'पुणो'** शब्द तथा ३७ वीं गाथा में **'वाहए'** शब्द दो-दो बार आया है अतः यमक अलंकार भी है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

**अध्ययन २—गाथा ३—'कालीपव्वंगसंकासे'**—लम्बी भूख के कारण काकजंघा (वनस्पति विशेष) के समान **'किसे धमणिसंतए'** कृश हो गया है धमनियों का जाल ! उपमालंकार।

**गाथा १०—'नागो संगामसीसे वा'** जैसे हस्ती संग्राम में आगे होकर शत्रुओं को जीतता है वैसे **'समरेव महामुणी'** समभाव वाला महामुनि परीषह को जीते ! उदाहरण अलंकार।

**गाथा १७—'पंकभूया उ इत्थिओ'**—स्त्रियाँ कीचड़ स्वरूप हैं। रूपक अलंकार।

**गाथा २४—'सरिसो होइ बालाणं'**—मूर्ख के समान होता है **'अवकोतेज्जा परे भिक्खु'** क्रोध करने वाला भिक्षु/उपमालंकर, तथा अनुप्रास !

**गाथा २५—'सोच्चाणं फरुसा भासा, दारुणा गामकंटगा'**—दारुण (असह्य), ग्राम-कण्टक / कांटे की तरह चुभने वाली कठोर भाषा को सुनकर ! ....! उपमा तथा अनुप्रास।

**अध्ययन ३—गाथा ५—'सव्वट्ठेसु व खत्तिया'**—जैसे समस्त पदार्थों की प्राप्ति होने पर भी क्षत्रिय/राजा लोगों को बड़े राज्य से भी संतोष नहीं होता है वैसे ही **'पाणिणो कम्मकिब्विसा, न निविज्जन्ति संसारे !'** दुष्टकर्म करने वाले प्राणी संसार से निवृत नहीं होते हैं। उदाहरण तथा अनुप्रास।

**गाथा १२—'धम्मो सुद्धस्स चिट्ठई'**—धर्म शुद्ध हृदय में ठहरता है और वह शुद्ध हृदय वाला जीव **'निव्वाणं परमं जाइ, घयसित्त व्व पावए'** घृतसिक्त अग्नि की भांति परम निर्वाण को/विशुद्ध आत्मदीप्ति को प्राप्त होता है। उपमा और अनुप्रासालंकार है।

**अध्ययन ४—गाथा १—'असंखयं जीविय'**—जीवन असंस्कृत/अर्थात् एक बार टूट पुनः न संधने वाले धागे के समान है। इसमें रूपक तथा अनुप्रास है।

**गाथा ३—'तेणे जहा संधिमुहे गहीए'**—जैसे सेंध लगाते हुए संधिभुख में चोर पकड़ा जाता है वैसे ही **'एवं पया पेच्च इहं च लोए'** इस लोक में जीव अपने कृत कर्मों के कारण छेदा जाता है। उदाहरण तथा अनुप्रास है।

**गाथा ६—'घोरा मुहुत्ता'**—समय भयंकर है। इसमें रूपक और अतिशयोक्ति।

—**'भारंड पक्खीव चरेऽप्पमत्तो'** भारंडपक्षी के समान पंडित पुरुष अप्रमत्त होकर विचरे। उपमालंकार।

—**'सुत्तेसु यावि पडिबुद्धजीवी'** सोये हुए लोगों में जागता हुआ प्रतिबुद्ध जीव। विरोधाभासालंकार। गाथा में अर्थान्तरन्यास तथा अनुप्रास भी है।

**गाथा ७—'लाभान्तरे जीविय वूहइत्ता, पच्छा परिन्नाय मलावधंसी'** जब तक शरीर से लाभ (धर्मक्रिया) है तब तक इसकी वृद्धि करे साधक एवं बाद में प्रत्याख्यान द्वारा इसे छोड़ दे। इसमें अपह्नुति, अनुप्रास तथा यमक (**'माणो'** शब्द दो बार आया है) है।

**गाथा ८—छंदं निरोहेण उवेइ मोक्खं, आसे जहा सिक्खिय वम्मधारी।**
**पुव्वाइं वासाइं चरेऽप्पमत्तो, तम्हा मुणी खिप्पमुवेई मोक्खं ॥**

शिक्षित और कवचधारी अश्व जैसे युद्ध से पार हो जाता है वैसे स्वच्छन्दता का निरोध करने वाला साधक संसार से पार हो जाता है, जीवन में अप्रमत्त होकर विचरण करने वाला

धम्मो दीवो
संसार समुद्र में
धर्म ही दीप है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मुनि शीघ्र ही मोक्ष को प्राप्त होता है।' इसमें पुरुषावृत्ति अनुप्रास, यमक (उवेह शब्द दो बार) एवं 'छंदं' शब्द से श्लेष अलंकार प्रकट होता है।

**अध्ययन ५—गाथा १**—'**एगे**' शब्द दो बार अतः यमक और '**अण्णवंसी-महोहंसी**' संसार रूपी महाप्रवाहवाला समुद्र! इसमें रूपक अलंकार तथा गाथा में अनुप्रास तथा अर्थान्तर-न्यासालंकार भी है।

**गाथा १०**—'**सिसुणागु व्व मट्टियं**'—केंचुए की तरह दोनों ओर से '**दुहओ मलं संचिणई**' राग-द्वेष के द्वारा जीव कर्ममल को इकट्ठा करता है। इसमें उदाहरण तथा अनुप्रास है।

**गाथा १४-१५-१६**—'**जहा सागडिओ जाणं, समं हिच्चा महापहं।'**
'**विसमं मग्गमोइण्णो, अक्खे भग्गंमि सोयई॥**

जैसे गाड़ीवान समतल महान् मार्ग को जानकर भी छोड़कर विषम मार्ग में चल पड़ता है और गाड़ी की धुरा टूट जाने पर शोक करता है, वैसे ही (गाथा १५ में) '**एवं धम्मं विउक्कम्म**' धर्म का उल्लंघन करने वाले की स्थिति बनती है।—उदाहरण तथा '**मच्चु मुहं**' मृत्यु के मुख में—इसमें मानवीय अलंकार है। तथा (गाथा १६ में) '**धुत्ते व कलिणा जिए**' जुआरी की तरह एक दाव में सब जीते दावों को हारने वाले की तरह शोक करता है। उपमा तथा अनुप्रास है गाथा में।

**गाथा २०**—'**सन्ति एगेहिं भिक्खूहिं, गारत्था संजमुत्तरा।**
**गारत्थेहि य सव्वेहिं साहवो संजमुत्तरा॥**

कुछ भिक्षुओं की अपेक्षा गृहस्थ संयम में श्रेष्ठ होते हैं किन्तु शुद्धाचारी साधु गृहस्थों से संयम में श्रेष्ठ है—विरोधाभास, यमक तथा अनुप्रासालंकार है।

**अध्ययन ६—गाथा ४**—इसमें सम तथा अनुप्रास है।

**गाथा ११**—इसमें सम अलंकार है।

**गाथा १६**—'**पक्खीपत्तं समादाय**'—पक्षी के पंखों की तरह पात्र ग्रहण करे। उपमालंकार।

**अध्ययन ७—गाथा ९**—'**अय व्व आगयाएसे, मरणंतमि सोयई**'—मेहमान के आने पर (मृत्यु के आने पर) बकरा शोक करता है वैसे ही कर्म से भारी जीव मृत्यु के आने पर शोक करता है।—उदाहरण तथा अनुप्रास।

**गाथा ११ से १३**—'**जहा कागिणिए हेउं, सहस्सं हारए नरो**'—काकिणी के लिए हजार कार्षापण हारने वाले की तरह तथा '**अपत्थं अम्बगं भोच्चा, राया रज्जं तु हारए**' एक अपथ्य आम्रफल खाकर जीवन तथा राज्य हारने वाले की तरह भोगासक्त जीव जीवन तथा नर-आयु हार जाता है।—उदाहरण तथा गाथा १२ में 'कामा' शब्द दो बार आने से अतः यमक और अनुप्रास है।

**गाथा १४**—'**एगो**' शब्द दो बार अतः यमक।

**गाथा १५**—'**ववहारे उवमा एसा**'—'**एवं धम्मे वियाणह**' इसमें उपमालंकार।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

**गाथा १६:—माणुसत्तं भवे मूलं, लाभो देवगई भवे।**
**मूलच्छेएण जीवाणं, नरगतिरिक्खत्तणं धुवं ॥'**

—मनुष्य भव मूल धन है, देवभव लाभ रूप है और नरक-तिर्यंचभव मूलधन की हानि रूप है अतः रूपक अलंकार दृष्टव्य है।

**गाथा १९—'मूलियं ते पवेसन्ति माणुसं जोणि....।'**—मूलधन के समान मनुष्य योनि अतः उपमा तथा अनुप्रास।

**गाथा २३—'जहा कुसग्गे उदग्गं—समुद्देण सम्मं मिणे।'**—समुद्र की तुलना में कुशाग्र-जल जैसे क्षुद्र है वैसे **'माणुस्सगा कामा-देवाकामाण अंतिए'** देव के कामभोगों के सामने मनुष्य के कामभोग क्षुद्र हैं। उदाहरण तथा अनुप्रास और समालंकार।

**अध्ययन ८—गाथा ५—'बज्झई मच्छिया व खेलंमि'**—भोगों में आसक्त जीव कर्म से वैसे ही बँध जाता है जैसे श्लेशम/कफ में मक्खी। इसमें उदाहरण अलंकार है। साथ ही गाथा में अनुप्रास है।

**गाथा ६—'अह संति सुव्वया साहू, जे तरंति अतरं वणिया व!'**—जो सुव्रती साधक/साधु हैं वे दुस्तर कामभोगों को उसी प्रकार तैर जाते हैं जैसे वणिक् समुद्र को! —इसमें भी उदाहरण एवं अनुप्रास अलंकार है।

**गाथा ७—'पाणवहं मिया अयाणंता'**—पशु की भांति अज्ञानी जीव। उपमा तथा अनुप्रास।

**गाथा ९—'तओ से पावयं कम्मं, निज्जाइ उदगं व थलाओ।'**—सम्यक् प्रवृत्ति वाले साधक के जीवन से पापकर्म वैसे ही निकल जाता है जैसे ऊँचे स्थान से जल।—उदाहरण अलंकार।

**गाथा १८—'नो रक्खसीसु गिज्झेज्जा, गंडवच्छासु अणेगचित्तासु।**
**'जाओ पुरिसं पलोभित्ता, खेल्लंति जहा व दासेहिं।'**

प्रस्तुत गाथा में 'गंडवच्छासु'—'वक्ष में फोड़े रूप स्तन वाली' में रूपक तथा 'दासेहिं' में वासनासिक्त मनुष्य को दास की उपमा दी गई है।

**अध्ययन ९—गाथा ९-१०—'मिहिलाए चेइए वच्छे, सीयच्छाए मणोरमे।**
**पत्त-पुप्फ-फलोवेए, बहूणं बहुगुणे सया।**
**वाएण हीरमाणंमि, चेइयंमि मणोरमे।**
**दुहिया असरणा अत्ता, एए कंदंति भो! खगा॥'**

यहाँ नमि राजर्षि ने अपने आपकी चैत्य-वृक्ष से और पुरजन तथा परिजनों को पक्षियों से उपमित किया है अतः ये गाथाएँ रूपक अलंकार की श्रेष्ठ द्योतक हैं। साथ ही **'वच्छे'** (वृक्ष और राजर्षि) **'खगा'** (पक्षी और पुरजन तथा परिजन) शब्द श्लेष अलंकार को अभिव्यक्त कर रहे हैं।

**गाथा १४**—इस गाथा में **'किंचण'** शब्द दो बार आया अतः यमक तथा अनुप्रास अलंकार है गाथा में! तथा विरोधाभास अलंकार भी दृष्टव्य है, क्योंकि नमि राजर्षि इन्द्र से कहते है कि मिथिला के जलने से मेरा कुछ भी नहीं जल रहा है **'न मे डज्झइ किंचण'** जब कि वे महाराजा हैं और सारा राज्य उनका है।

धम्मो दीवो
संसार समुद्र में
धर्म ही दीप है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

**गाथा २०-२१-२२**—इन गाथाओं में भी रूपक अलंकार दृष्टव्य है—श्रद्धा को नगर, तप और संयम को अर्गला (सांकल), क्षमा को प्राकार (परकोटा), खाई और शतघ्नी रूप में बताया है।

—पराक्रम को धनुष, ईर्या समिति उसकी डोर, धृति को उसकी मूठ तथा सत्य से बांधकर;

—तप के बाणों में युक्त धनुष से कर्मरूपी कवच को भेद कर अन्तर्युद्ध का विजेता मुनि संसार से मुक्त होता है।

—इन गाथाओं यमक, अनुप्रास अलंकार भी है।

**गाथा ३६**—इस गाथा में कहा गया है कि—'५ इन्द्रियाँ, ४ कषाय और १० वाँ मन ये दुर्जेय हैं। एक अपने आपको जीत लेने पर सभी जीत लिये जाते हैं।' पहले इन्हें दुर्जेय बताकर जीतना भी बताया गया है अतः विरोधाभास अलंकार तथा अनुप्रास अलंकार भी है।

**गाथा ४८—'इच्छा उ आगाससमा'**—इच्छा आकाश के समान अनंत है। इसमें उपमा, तथा गाथा में यमक और अनुप्रास अलंकार है।

**गाथा ५३—'सल्लं कामा, विसं कामा, कामा आसीविसोवमा।**
**कामे भोए पत्थेमाणा, अकामा जंति दोग्गइं॥**

इसमें काम को शल्य, विष और आशीविष सर्प से उपमित किया गया है अतः रूपक तथा यमक और विरोधाभास अलंकार है।

**अध्ययन १०—गाथा १—'दुमपत्तए पंडुयए जहा....एवं मणुयाणं जीविमं।'**—जैसे समय बीतने पर वृक्ष का सूखा हुआ सफेद पत्ता गिर जाता है, वैसे ही मनुष्य का जीवन है। इसमें उदाहरण अलंकार है।

**गाथा २—'कुसग्गे जह ओसबिंदुए'**—कुशाग्र पर टिके ओसबिंदु की स्थिति क्षणिक है उसी तरह मनुष्य का जीवन भी क्षणिक है। उदाहरण अलंकार।

**गाथा २८—'वोच्छिन्द सिणेहमप्पणो, कुमुयं व सारइयं पाणियं'**—जैसे शरत्कालिक मुमुद पानी से लिप्त नहीं होता है उसी प्रकार तुम भी सभी स्नेह (लिप्तता) को त्याग दो। उदाहरण तथा गाथा में यमक और अनुप्रास है।

**गाथा २९—'मा वन्तं पुणो वि आइए'**—वमन किए भोगों को पुनः स्वीकार मत कर। इसमें भोगों को वमन बताया गया है अतः रूपकालंकार है तथा '**वन्तं**' शब्द में श्लेष [वन्तं—वमन और भोगवमन]।

**गाथा ३२—'अवसोहिय कण्टगापहं, ओइण्णो सि पहं महालयं'**'। इस गाथा में कंटकाकीर्ण पथ एवं राजपथ की बात कही गयी है और इस बात का लक्ष्य है—संसार का मार्ग (कंटकाकीर्ण) तथा आत्मा का मार्ग (राज पथ)। अतः अन्योक्ति अलंकार है।

**गाथा ३४**—इस गाथा में संसार को सागर से उपमित किया है अतः रूपक तथा अनुप्रास अलंकार है।

**अध्ययन ११—गाथा १५ से ३०**—इन गाथाओं में उदाहरण, उपमा अनुप्रास तथा श्लेष अलंकार मिलते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

**अध्ययन १२**—गाथा १२—'**पुण्णमिणं खु खेत्त**'—पुण्य रूपी क्षेत्र (कृषि भूमि)। इसमें रूपक है तथा गाथा में उदाहरण है।

गाथा १३—'**जे माहणा जाइ-विज्जोववेया**' 'ताइं तु खेत्ताइं....।'—जो ब्राह्मण जाति और विद्या से श्रेष्ठ हैं वे पुण्यक्षेत्र हैं। अर्थात् बाकी सब पापक्षेत्र। इसमें तिरस्कार अलंकार है।

**गाथा** १४—जो कषायग्रस्त हैं तथा जिनमें हिंसा, झूठ, चोरी और परिग्रह है वे ब्राह्मण जाति और विद्या से विहीन पापक्षेत्र हैं। इसमें भी '**खेत्ताइं सुपावयाइं**' में रूपक है।

गाथा २६—'**गिरिं नहेहिं खणह, अयं दन्तेहिं खायह।**
**जायतेयं पाएहिं हणह**···················।'

पर्वत को नख से खोदना, दांतों से लोहा चबाना और पैरों से अग्नि को कुचलना असंभव है। अतः इसमें असंभव नामक अलंकार है।

गाथा २७—'**अगणिं व पक्खंद पयंगसेणा**'— पतंगे की भांति अग्नि में गिरना। इसमें उपमा तथा अनुप्रास है।

गाथा ४३—**के ते जोई ? के व ते जोइट्ठाणे ? का ते सुया ? किं व ते कारिसंगं ?**
**एहा य ते कयरा संति ? भिखू ! कयरेण होमेण हुणासि** जोइं ?

इसमें प्रश्न ही प्रश्न है अतः परिसंख्या अलंकार है।

**गाथा** ४४—तप ज्योति, आत्मा उसका स्थान, त्रिभोग कड़छी, शरीर कण्डे, कर्म इन्धन, संयम में प्रवृत्ति शांतिपाठ है। अतः आत्मिक यज्ञ का स्वरूप है। इसमें रूपक अलंकार है।

गाथा ४५ में परिसंख्या तथा ४६ में रूपक अलंकार है, यथा—

**गाथा** ४५-४६—'आत्मभाव की प्रसन्नतारूप अकलुष लेश्यावाला धर्म **मेरा ह्रद** है। जहाँ स्नान कर मैं विशुद्ध, विमल एवं **कर्मरज से** दूर होता हूँ।' साथ ही अनुप्रास अलंकार भी।

**अध्ययन १३**—**गाथा** १६—'सब गीत विलाप है, सब नृत्य विडंबना है, सब आभरण भार है और सब काम-भोग दुःखप्रद हैं। इस गाथा में रूपक, विरोधाभास, यमक तथा अनुप्रास अलंकार है।

**'सव्वं विलवियं गीयं, सव्वं नट्टं विडम्बियं।**
**सव्वे आभरणा भारा, सव्वे कामा दुहावहा॥'**

गाथा २२—'**जहेव सीहो व मियं गहाय, मच्चू नरं नेइ हु अन्तकाले।**'—जैसे सिंह हरिण को पकड़कर ले जाता है वैसे ही मृत्यु मनुष्य को ले जाती है। इसमें उदाहरण तथा उपमा अलंकार है।

गाथा ३०—'**नागो जहा पंकजलावसन्नो**'—'जैसे पंकजल-दलदल में धंसा हाथी स्थल को देखता है पर किनारे नहीं पहुंच पाता है। वैसे मनुष्य कामभोगों में आसक्त हो भिक्षुमार्ग पर नहीं आते।' इसमें उदाहरण अलंकार है।

धम्मो दीवो
संसार समुद्र में
धर्म ही दीप है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

**अध्ययन १४—गाथा १—'देवा भवित्ताणं·······'** (देव लोक के समान) उपमा अलंकार। तथा **'पुरे'** गाथा में शब्द दो बार आया अतः यमक और अनुप्रास है।

**गाथा १५**—में स्वभावोक्ति तथा 'इयं शब्द' ४ बार आया अतः यमक अलंकार है।

**गाथा १७—'धम्मधुरा'**—धर्म की धुरा। इसमें रूपक।

**गाथा १८—'जहा य अग्गी अरणीउऽसन्तो, खीरे घयं तेल्ल महातिलेसु।**
**एमेव जाया ! सरीरंसि सत्ता ·······॥'**

जैसे अरणि में आग, दूध में घी, तिल में तेल है वैसे शरीर में आत्मा है। इसमें उदाहरण अलंकार है।

**गाथा २२-२३—केण अब्भाहओ लोगो, केण वा परिवारिओ ?**
**का वा अमोहा वुत्ता ?........................ !'**

परिसंख्या तथा यमक अलंकार ! २२ गाथा में प्रश्न और २३ में उत्तर है।

**गाथा २४-२५—'जा-जा वच्चइ रयणी, न सा पडिनियत्तई'**—जो जो रात्रि जा रही है वह फिर लौट कर नहीं आती है।'—इसमें स्वभावोक्ति, यमक तथा मानवीय अलंकार है।

**गाथा २७—'जस्सत्थि मच्चुणा सक्खं'**—जिसकी मृत्यु के साथ मैत्री है। इसमें असंभव, अनुप्रास तथा **'जस्स'** शब्द दो बार आया है अतः यमक अलंकार है।

**गाथा २९—'साहाहि रुक्खो लहए समाहिं'**—वृक्ष शाखा से सुंदर लगता है। यहाँ यह बात इस संदर्भ में कही गयी है कि पुत्र से पिता का घर शोभा पाता है। इसमें रूपक अलंकार है।

**गाथा ३०**—'पंखहीन पक्षी, सेना रहित राजा और धन रहित व्यापारी जैसे असहाय होते हैं वैसे भृगु भी पुत्र विना असहाय है।' इसमें उदाहरण तथा अनुप्रास है।

**गाथा ३३—'जुण्णो व हंसो पडिसोत्तगामी'**—प्रतिस्रोत में तैरनेवाले बूढ़े हंस की तरह/ इसमें उपमा अलंकार है जो भृगु पुरोहित को दी गई है। क्योंकि वह भी प्रौढ़ हो गया है।

**गाथा ३४—'जहा य भोई ! तणुयं भुयंगो, निम्मोयणिं हिच्च पलेइ मुत्तो'**
**एमेए जाया पयहंति भोए......................................।'**

जैसे सांप अपने शरीर की केंचुली को छोड़कर मुक्तमन से चलता है वैसे ही दोनों पुत्र भोगों को छोड़कर जा रहे हैं। इसमें उदाहरण अलंकार है।

**गाथा ३५—'छिंदित्तु जालं अबलं व रोहिया'**—रोहित मत्स्य जैसे कमजोर जाल को तोड़कर निकल जाते हैं वैसे **'मच्छा जहा कामगुणे पहाय'** साधक कामगुणों को छोड़कर निकल जाते हैं। इसमें उदाहरण अलंकार है।

**गाथा ३६—'जहेव कुंचा समइक्कमंता, तयाणि जालाणि दलित्तु हंसा'**—जैसे क्रौंच पक्षी और हंस बहेलियों के द्वारा बिछाया गया जाल काटकर आकाश में स्वतंत्र उड़ जाते हैं वैसे ही भृगु और दोनों पुत्र संसार-जाल को तोड़कर संयमी बनने जा रहे हैं। इसमें भी उदाहरण अलंकार है।

**गाथा ४०—'जया-तया वा'** छेकानुप्रास तथा गाथा में स्वभावोक्ति है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

**गाथा ४१**—'**नाहं रमे पक्खिणि पंजरे वा**'—जैसे पक्षिणी पिंजरे में सुख नहीं मानती है वैसे ही मैं भी राज्यवैभव में सुख नहीं मानती हूँ। उदाहरण तथा उपमा।

**गाथा ४२-४३**—**दवग्गिणा जहा रण्णे, डज्झमाणेसु जंतुसु !**'—जैसे वन में लगे दावानल में जन्तुओं को जलते देख अन्य प्राणी प्रभावित होते हैं वैसे ही हम भी राग-द्वेष की अग्नि में जलते हुए जगत् को समझ नहीं पाये हैं।

**गाथा ४६**—'जिस गीध पक्षी के पास मांस होता है उसी पर दूसरे मांसभक्षी झपटते हैं। जिसके पास नहीं होता है उस पर नहीं। अतः मैं भी मांसोपमा वाले कामभोगों को छोड़कर निरामिष भाव से विचरण करूंगी!' इसमें उदाहरण दिया गया है अतः उदाहरण अलंकार।

**गाथा ४७**—'**उरगो सुवण्णपासे व, संकमाणो तणुं चरे,**—जैसे गरुड़ के समीप सांप शंकित होकर चलता है वैसे ही कामभोगों से शंकित होकर चले। कामभोग गीध के समान हैं।' इसमें उदाहरण तथा '**गिद्धोवमे**' में उपमालंकार है।

**गाथा ४८**—'**नागो व्व बंधणं छित्ता**'—बंधन तोड़कर हाथी अपने निवासस्थान-जंगल में चला जाता है वैसे ही हमें भी मोक्ष के पथ में चलना चाहिए!' उदाहरण अलंकार है!

**अध्ययन १६**—**गाथा १५**—'**धम्मसारही**'—धर्मरूपी रथ का चालक/सारथी। इसमें रूपक। '**धम्म**' शब्द की पुनरावृत्ति अतः यमक।

**अध्ययन १८**—**गाथा ४७**—'**नरिंदवसभा**' राजाओं में वृषभ के समान। उपमालंकार!

**गाथा ४९**— '**कम्ममहावणं**'—कर्मरूपी महावन। रूपक।

**गाथा ५१**—'**अद्दाय सिरसा सिरं**'—सिर देकर (अहं) सिर (मोक्ष) प्राप्त किया। तुल्ययोगिता तथा यमक अलंकार। तथा '**सिरं**' शब्द में श्लेष मस्तिष्क और मोक्ष।

**गाथा ५४**—'**नीरए**'—रज रहित; कर्मरूपी रज रहित। श्लेष अलंकार।

**अध्ययन १९**—**गाथा ११**—'**महण्णवाओ**' संसार रूप महासागर। रूपक।

**गाथा १२**—'**विसफलोवमा**'—भोग विषफल के समान। उपमा।

**गाथा १४**—'**फेणबुब्बुय**'—शरीर पानी के बुलबुले के समान है। उपमा।

**गाथा १८**—'**जहा किंपागफलाणं, परिणामो न सुंदरो।**
**एवं भुत्ताण भोगाण परिणामो न सुंदरो॥**'

जैसे विष रूप किम्पाक फल का परिणाम सुंदर नहीं आता है, वैसे ही भोगे गये कामभोगों का परिणाम भी सुंदर नहीं होता!—उदाहरण तथा यमक।

**गाथा १९-२०-२१-२२**—जैसे पाथेय सहित पथिक सुखी होता है और पाथेय रहित दुःखी, वैसे ही धर्मरूपी पाथेय वाला जीव सुखी अन्यथा दुःखी होता है, इन गाथाओं में दृष्टांत तथा यमक अलंकार है।

**गाथा ३६**—'**...........गुणाणं तु महाभरो।**
**गुरुओ लोहभारो व्व,...........॥**'

धम्मो दीवो
संसार समुद्र में
धर्म ही दीप है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लोह-भार के समान साधु के गुणों का महान् गुरुतर भार है। उपमालंकार !

**गाथा ३७—आगासे गंगसोउव्व, पडिसोओ व्व दुत्तरो।**
**बाहाहिं सागरो चेव, तरियव्वो गुणोयही॥**

जैसे आकाशगंगा का स्रोत और प्रतिस्रोत दुस्तर है। जिस प्रकार सागर में भुजाओं से तैरना दुष्कर है वैसे गुणोदधि-संयम के सागर में तैरना दुष्कर है।' —उदाहरण। यमक तथा 'गुणोदहि' में रूपक।

**गाथा ३८**—संयम बालू रेत के कवल के समान स्वादरहित है। तप का आचरण तलवार की धार पर चलने के जैसा दुष्कर है। —उदाहरण तथा यमक।

**गाथा ३९**—सांप की तरह एकाग्र दृष्टि से चारित्रधर्म में चलना कठिन है। लोहे के यव—जौ चबाना जैसे दुष्कर है वैसे ही चरित्र का पालन दुष्कर है। —उदाहरण, उपमा।

**गाथा ४०**—जैसे प्रज्वलित ज्वाला को पीना दुष्कर है वैसे ही युवावस्था में श्रमण-धर्म का पालन दुष्कर है। — उदाहरण अलंकार।

**गाथा ४१**—जैसे वस्त्र के कोत्थल/थैले को हवा से भरना कठिन है, वैसे ही कायरों के द्वारा श्रमणधर्म का पालन। यमक उदाहरण तथा असंभव अलंकार है।

**गाथा ४२-४३—'जहा तुलाए तोलेउं, दुक्करं मन्दरो गिरी॥ ४२॥**
**'जहा भुयाहिं तरिउं, दुक्करं रयणागरो॥ ४३॥**

जैसे मेरु को तराजू में तोलना दुष्कर है। उदाहरण तथा असंभव व यमक।

जैसे रत्नाकर को भुजा से पार करना कठिन है। यमक, उदाहरण, असंभव तथा रूपक [दमसागरो]

**गाथा ४७—'जम्माणि मरणाणि'** में छेकानुप्रास तथा **'जरा-मरण-कंतारे'**—जरा-मरण रूप जंगल, में रूपक अलंकार।

**गाथा ५१**—महाभयंकर दावाग्नि के तुल्य मरु प्रदेश में **'महादवग्गिसंकासे'** में उपमालंकार।

**गाथा ५४—'महाजन्तेसु उच्छू वा'** ईख की तरह बड़े-बड़े यंत्र। उपमालंकार।

**गाथा ५६—'असीहि अयसिवण्णाहिं, भल्लीहिं पट्टिसेहि य'** यहां छेकानुप्रास को दर्शा रहा है। तथा तलवार अलसी के फूलों के समान नीले रंग की, इसमें उपमा।

**गाथा ५७—'रोज्झो वा जह पाडिओ'**—रोझ (पशु) की भांति पीट कर भूमि पर गिराया गया हूँ—उपमालंकार।

**गाथा ५८—'चियासु महिसो विव'**—चिता में भैंसे की भांति मैं जलाया गया—उपमालंकार।

**गाथा ५९—'बला संडासतुण्डेहिं, लोहतुण्डेहिं पक्खिहिं।**
**विलुत्तो विलवन्तोऽहं, ढंकगिद्धेहिऽणन्तसो॥'**

'लोह के समान कठोर संडासी जैसी चोंच वाले ढंक और गीध पक्षियों द्वारा, मैं नोचा गया।' उपमा, छेकानुप्रास तथा यमक अलंकार है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

**गाथा ६४—'मच्छो वा'** मत्स्य की तरह छलपूर्वक पकड़ा गया। उपमालंकार।

**गाथा ६६**—बाज पक्षियों, जाली तथा वज्रलेपों के द्वारा **पक्षी की भाँति 'सउणो विव'** उपमालंकार!

**गाथा ६७—'कुहाडफरसुमाईहिं, वड्ढईहिं दुमो विव'**—बढ़ई के द्वारा वृक्ष की तरह कुल्हाड़ी और फरसादि से मैं काटा गया। उपमालंकार तथा **'फरसुमाईहिं-वड्ढईहिं'** छेकानुप्रास!

**गाथा ६८—'कुमारेहिं अयं पिव'**—लुहारों के द्वारा लोहे की भांति। उपमालंकार। तथा **'चवेडमुट्ठिमाईहिं कुमारेहिं'** में छेकानुप्रास!

**गाथा ७०—'अग्गिवण्णाइं'**—अग्नि जैसा लाल। उपमालंकार!

**गाथा ७८ तथा ८४—'एगभूओ अरण्णे वा, जहा उ चरई मिगो।**
**एवं धम्मं चरिस्सामि, संजमेण तवेण य।'**

जैसे मृग जंगल में अकेला विचरता है वैसे ही मैं भी संयम और तप के साथ एकाकी होकर धर्म का आचरण करूँगा। उदाहरणालंकार।

**गाथा ८७—'महानागो व्व कंचुयं'**—जैसे महानाग केंचुल को छोड़ता है वैसे ममत्व को मृगापुत्र ने छोड़ दिया। दृष्टान्तालंकार।

**गाथा ८८—'रेणुयं व पडे लग्गं'**—कपड़े पर लगी रज की तरह [मृगापुत्र ऋद्धि-धन मित्र-पुत्र-कलत्र और ज्ञातिजन को] झटककर संयमयात्रा को निकल पड़ा। उपमालंकार।

**गाथा ९७—'विणियट्टन्ति भोगेसु, मियापुत्ते जहा रिसी'**—पण्डित पुरुष/संबुद्ध पुरुष कामभोगों से वैसे ही निवृत्त होते हैं जैसे महर्षि मृगापुत्र! उदाहरणालंकार।

**गाथा ९९—'धम्मधुरं'** रूपक।

**अध्ययन २०—गाथा ३—'नाणा'** शब्द ३ बार आया है अतः यमक। **'नंदणोवमं'** उद्यान नंदन वन के समान उपमालंकार। तथा स्वभावोक्ति।

**गाथा २०—'पवेसेज्ज अरी कुद्धो, एवं मे अच्छिवेयणा'**—जैसे शत्रु क्रुद्ध होकर शरीर के मर्मस्थानों में तीक्ष्ण शस्त्र घोंपते हैं वैसे ही मेरी आँखों में तीव्र वेदना हो रही थी। उदाहरणालंकार।

**गाथा २१—'इंदासणिसमा घोरा'**—इन्द्र के वज्रप्रहार से भयंकर वेदना होती है वैसे ही मुझे भी वेदना हो रही थी—उदाहरण।

**गाथा ३६—'अप्पा नई वेयरणी, अप्पा मे कूडसामली।**
**अप्पा कामदुहा धेणू, अप्पा मे नंदणं वणं॥'**

आत्मा को ही वैतरणी, कूडसामली, कामदुघा धेनु और नंदन वन से आरोपित किया गया है अतः रूपक है। आत्मा को एक ओर वैतरणी तथा कूडशामली वृक्ष बताया तथा दूसरी ओर कामदुधा धेनु और सुखप्रद नंदनवन कहा है अतः विरोधाभासालंकार तथा यमकालंकार भी है।

धम्मो दीवो
संसार समुद्र में
धर्म ही दीप है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

**गाथा ३७—'अप्पा कत्ता विकत्ता य, दुहाण य सुहाण य।**
**अप्पा मित्तममित्तं च, दुप्पट्ठिय-सुप्पट्ठिओ ॥'**

छेकानुप्रास, यमक, रूपक तथा विरोधाभास है।

**गाथा ४२—'पोल्ले व मुट्ठी जह से असारे, अयन्तिए कूडकहावणे वा।**
**राढामणी वेरुलियप्पगासे, अमहग्घए होइ य जाणएसु ॥'**

जो पोली (खाली) मुट्ठी की तरह निस्सार है, खोटे सिक्के की तरह अप्रमाणित है, वैडूर्य की तरह चमकने वाली तुच्छ राढ़ामणि-काचमणि है—इनमें उपमा अलंकार है।

**गाथा ४४—'विसं तु पीयं जह कालकूडं'**—पिया हुआ कालकूट विष; **'हणाइ सत्थं जह कुग्गहीयं'**—उलटा पकड़ा शस्त्र; **'हणाइ वेयाल इवाविपन्नो'**—अनियंत्रित वेताल जैसे विनाशकारी है, वैसे ही **'एसे व धम्मो विसओववन्नो'** विषय-विकारों से युक्त धर्म भी विनाशकारी होता है। इस गाथा में उदाहरण तथा **'जह'** शब्द की दो बार आवृत्ति है, अतः यमक है।

**गाथा ४७—'अग्गी विवा सव्वभक्खी भवित्ता'**—अग्नि की भाँति सर्वभक्षी। इसमें उपमा अलंकार है।

**गाथा ५०—'कुररी विवा भोगरसाणुगिद्धा, निरट्ठसोया परियावमेइ।'** जैसे भोगरसों में आसक्त होकर निरर्थक शोक करने वाली कुररी (गीध) पक्षिणी परिताप को प्राप्त होती है। इसमें उदाहरणालंकार है।

**अध्ययन २१—गाथा १४—'सीहो व सद्देण न संतसेज्जा'**—सिंह की भाँति भयोत्पादक शब्द को सुनकर भी संत्रस्त न हो। उपमालंकार।

**गाथा १७—'संगामसीसे इव नागराया'**—नागराज/हाथी की तरह व्यथित न हो। उपमालंकार।

**गाथा १९—'मेरुव्व वाएण अकम्पमाणो'** वायु से अकंपित मेरु की तरह। उपमालंकार।

**गाथा २३—'ओभासई सूरिए वऽन्तलिक्खे'**—अन्तरिक्ष में सूर्य की भाँति धर्मसंघ में प्रकाशमान होता है। उपमालंकार।

**गाथा २४—'तरित्ता समुद्दं व महाभवोघं'**—समुद्र की भाँति विशाल संसारप्रवाह को तैर कर मोक्ष में गए। उपमा।

**अध्ययन २२—गाथा ६—'झसोयरो'**—मछली जैसा कोमल उदर। उपमालंकार।

**गाथा ७—'विज्जुसोयामणिप्पभा'**—विद्युत् के प्रभाव के समान शरीर की कांति। उपमालंकार।

**गाथा ३०—'····भमरसन्निभे, कुच्च-फणग-पसाहिए'**—कूर्च और कंघी से संवारे भौंरे जैसे काले केश। उपमा।

**गाथा ४१—'जइ'** शब्द दो बार आया अतः यमक है। रूप की उपमा में कहा है—**'रूवेण वेसमणो, ललिएण नलकूबरो····सक्खं पुरंदरो।'**

**गाथा ४२—'पक्खंदे जलियं जोइं, धूमकेउं दुरासयं।**
**नेच्छंति वन्तयं भोत्तुं, कुले जाया अगंधणे ॥'**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अगन्धन कुल में उत्पन्न हुए सर्प, धूम की ध्वजा वाली, प्रज्ज्वलित, भयंकर, दुष्प्रवेश अग्नि में प्रवेश कर जाते हैं किन्तु वमन किए हुए अपने विष को पुनः पीने की इच्छा नहीं करते हैं। इसमें उपमा (धूम की ध्वजा) की, उदाहरण, विरोधाभास है।

**गाथा ४४—'मा कुले गंधणा होमो'**—हम कुल में गन्धन सर्प की तरह न बनें। उपमालंकार।

**गाथा ४५—'वायाविद्धो व्व हडो'**—वायु से कंपित हड़ (वनस्पतिविशेष) की तरह अस्थिरात्मा। उपमालंकार 'जा-जा' में यमक।

**गाथा ४६—'गोवालो-भंडवालो वा, जहा तद्दव्वऽणिस्सरो।**
**एवं अणिस्सरो तं पि, सामण्णस्स भविस्ससि॥'**

जैसे गोपाल और भाण्डपाल गायों और किराने आदि का स्वामी नहीं होता है वैसे ही तू भी श्रामण्य का स्वामी नहीं होगा। उदाहरण। **गोवालो-भंडवालो** में छेकानुप्रास तथा **अणिस्सरो** दो बार आया, अतः यमकालंकार है।

**गाथा ४८—'अंकुसेण जहा नागो, धम्मे संपडिवाइओ'**—जैसे अंकुश से हाथी स्थिर हो जाता है वैसे ही रथनेमि संयम/धर्म में स्थिर हो गया। उदाहरण।

**अध्ययन २३—गाथा १८—'चंदसूर-समप्पभा'**—चंद्र और सूर्य की तरह सुशोभित। उपमा।

**गाथा ३६—'जिए' 'जिया'** शब्द दो-दो बार आये, अतः यमक।

**गाथा ४३—'रागद्दोसादओ तिव्वा, नेहपासा भयंकरा'**—तीव्र रागद्वेषादि और स्नेह भयंकर बन्धन हैं। रूपक।

**गाथा ४८—'भवतण्हा लया वुत्ता, भीमा भीमफलोदया'**—भवतृष्णा ही भयंकर लता है उसके भयंकर परिपाक वाले फल लगते हैं। रूपक।

**गाथा ५३—'कसाया अग्गिणो'**—कषाय अग्नियाँ हैं तथा **'सुय-सील-तवो जलं'** श्रुत, शील और तप जल हैं। रूपक।

**गाथा ५६ तथा ५८—'सुयरस्सीसमाहियं'**—श्रुतरूपी रश्मि/रस्सी/लगाम से **'मणो.... दुट्ठस्सो'** मन रूपी घोड़ा वश में करता हूँ। रूपक।

**गाथा ६३—'सम्मग्गं तु जिणक्खायं'** सन्मार्ग जिनोपदिष्ट है। रूपक।

**गाथा ६८—'धम्मो दीवो पइट्ठा य, गई-सरणमुत्तमं।'** धर्म ही द्वीप है, प्रतिष्ठा है, गति और उत्तम शरण है। रूपकालंकार।

**गाथा ७३—'सरीरमाहु नाव त्ति, जीवो वुच्चइ नाविओ।**
**संसारो अण्णवो वुत्तो, जं तरन्ति महेसिणो॥**

शरीर नौका है, जीव नाविक है, संसार समुद्र है जिसे महर्षि तैर जाते हैं। इस गाथा में रूपक अलंकार का भव्य चित्रण है।

**गाथा ७८—'जिणभक्खरो'**—जिनरूपी भास्कर/सूर्य। रूपकालंकार।

**अध्ययन २४—गाथा १—'पवयणमायाओ'** जिन-प्रवचन रूप माता। रूपकालंकार।

धम्मो दीवो
संसार समुद्र में
धर्म ही दीप है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

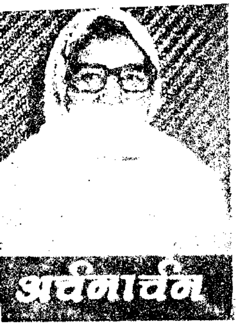




**अध्ययन २५—गाथा १—'जमजन्नंमि'**—यमरूप यज्ञ । रूपक ।

**गाथा १६—'अग्गिहोत्तमुहा वेया, जन्नट्ठी वेयसां मुहं ।**
**नक्खत्ताण मुहं चन्दो, धम्माणं कासवो मुहं ।।**

वेदों का मुख अग्निहोत्र है, यज्ञों का मुख यज्ञार्थी है, नक्षत्रों का मुख चन्द्र और धर्मों का मुख काश्यप है । इसमें रूपकालंकार है । 'मुहं' शब्द तीन बार आया, अत: यमक ।

**गाथा १७—'जहा चंदं गहाईया, चिट्ठन्ति पंजलीउडा ।**
**वन्दमाणा नमंसंता, उत्तमं मणहारिणो ।।'**

जैसे उत्तम एवं मनोहारी ग्रह आदि हाथ जोड़कर चंद्र की वंदना तथा नमस्कार करते हुए स्थित हैं, वैसे ही भगवान् ऋषभदेव हैं—उनके समक्ष भी जनता विनयावनत है । उदाहरणालंकार ।

**गाथा १८— 'भासच्छन्नाइवऽग्गिणो'**—जैसे अग्नि राख से ढँकी हुई होती है वैसे ही वे आच्छादित हैं यज्ञवादी स्वाध्याय और तप से आच्छादित हैं । उदाहरणालंकार ।

**गाथा १९—'अग्गी वा महिओ जहा'**—अग्नि के समान पूजनीय । उदाहरण ।

**गाथा २१—'जायरूवं जहामट्ठं, निद्धन्तमलपावगं'**—कसौटी पर कसे और अग्नि के द्वारा दग्धमल हुए / शुद्ध किए गए सोने की तरह जो विशुद्ध हैं । उदाहरण ।

**गाथा २७—'जहा पोमं जले जायं, नोवलिप्पइ वारिणा'**—जिस प्रकार जल में उत्पन्न हुआ कमल जल से लिप्त नहीं होता उसी प्रकार जो कामभोगों से अलिप्त रहता है उसे हम ब्राह्मण कहते हैं । उदाहरण ।

**गाथा ४०—'मा भमिहिसि भयावट्टे'** भय के आवर्तवाले । संसार सागर । रूपक ।

**गाथा ४२-४३**—गीला और सूखा दो मिट्टी के गोले दिवार पर फेंके । गीला चिपक जाता है और सूखा नहीं चिपकता है, वैसे ही आसक्त जीव विषयों में चिपक जाते हैं विरक्त नहीं । दृष्टान्त और यमक **'उल्लो, सुक्को,'** शब्द में, जो दो-दो बार आये हैं ।

**अध्याय २६— गाथा १ तथा ५३—'तिण्णा संसारसागरं'**—संसार रूपी सागर । रूपक ।

**अध्ययन २७—गाथा २—'वहणे वहमाणस्स, कंतारं अइवत्तई ।**
**जोए वहमाणस्स, संसारो अइवत्तई ।।'**

शकटादि वाहन को ठीक तरह वहन करनेवाला बैल जैसे कान्तार को सुखपूर्वक पार कर जाता है उसी तरह योग-संयम में संलग्न मुनि संसार को पार कर जाता है । इसमें उदाहरण तथा यमक, रूपक तथा पुनरुक्ति द्रष्टव्य है ।

**गाथा ७-८—'खलुंका जारिसा जोज्जा, दुस्सीसा वि हु तारिसा ।**
**जोइया धम्मजाणम्मि, भज्जंति धिइदुब्बला ।।'**

अयोग्य बैल जैसे वाहन को तोड़ देते हैं वैसे ही धैर्य में कमजोर शिष्यों को धर्मभाव में जोतने पर वे भी उसे तोड़ देते हैं । दृष्टान्त तथा **'धम्मजाणम्मि'** रूपक है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

**गाथा १४**—'**जायपक्खा जहा हंसा**'—पंख आने पर हंस उड़ जाते हैं वैसे भक्त-पान से पोषित कुशिष्य अन्यत्र चले जाते हैं। उदाहरण तथा हंसा में श्लेष [हंस और शिष्य]।

**गाथा १६**—'**जारिसा मम सीसाउ, तारिसा गलिगद्दहा**'—जैसे गलिगर्दभ/आलसी निकम्मे गधे होते हैं वैसे ही ये शिष्य हैं। इसमें उदाहरण।

**अध्ययन २९**—सूत्र ६—विरोधाभास। तथा '**माया-नियाण-मिच्छादंसणसल्लाणं**' इसमें रूपक है।

**सूत्र १३**—'**विसुद्धपायच्छित्ते य जीवे निव्वुयहियए ओहरियभारो व्व भारवहे**' प्रायश्चित्त से विशुद्ध बना जीव अपने भार को हटा देने वाले भारवाहक की तरह निर्वृत्तहृदय (शान्त) हो जाता है। इसमें उपमा है।

**सूत्र १७**—'**मग्गं च मग्गफलं च विसोहेइ**' साधक मार्ग (सम्यक्त्व) और मार्गफल (ज्ञान) को निर्मल करता है। इसमें रूपक है। '**आयरं च आयारफलं च आराहेइ**' आचार और आचारफल (मुक्ति) की आराधना करता है। इसमें भी रूपक है।

सूत्र ६०—'**जहा सूई ससुत्ता, पडिया वि न विणस्सइ**' जिस प्रकार ससूत्र (धागे सहित) सुई कहीं गिर जाने पर भी विनष्ट (गुम) नहीं होती है वैसे ही '**तहा जीवे ससुत्ते, संसारे न विणस्सई**' ससूत्र (श्रुतसम्पन्न) जीव संसार में विनष्ट नहीं होता है। इसमें उदाहरण है। '**ससुत्ता**' तथा '**विणस्सई**' में यमक है।

सम्पूर्ण २९ वें अध्ययन में परिसंख्या अलंकार मिलता है।

**अध्ययन ३०**—गाथा ५-६—'**जहा महातलायस्स, सन्निरुद्धे जलागमे।**
**उस्सिचणाए तवणाए, कमेणं सोसणा भवे॥**'

किसी बड़े तालाब का जल, जल आने के मार्ग को रोकने से, पहले के जल को उलीचने से और सूर्य के ताप से क्रमशः जैसे सूख जाता है—

'**एवं तु संजयस्सावि, पावकम्मनिरासवे।**
**भवकोडीसंचियं कम्मं, तवसा निज्जरिज्जई॥**'

उसी प्रकार संयमी के करोड़ों भवों के संचित कर्म, पापकर्म के आने के मार्ग को रोकने पर तप से नष्ट हो जाते हैं।

इसमें उदाहरण अलंकार है तथा साथ ही तप को सूर्य-ताप की उपमा दी गई है। अतः उपमा भी है।

**अध्ययन ३२**—गाथा ६—'**जहा य अण्डप्पभवा बलागा, अण्डं बलागप्पभवं जहा य।**
**एमेव मोहाययणं खु तण्हा, मोहं च तण्हाययणं वयंति॥**'

जैसे अंडे से बलाका (बगुली) और बलाका से अण्डा उत्पन्न होता है वैसे ही मोह से तृष्णा और तृष्णा से मोह उत्पन्न होता है। —उदाहरण, यमक पुनरुक्ति अलंकार है साथ ही भ्रांति भी है।

**गाथा ७**—'**कम्मबीयं**' कर्म-बीज। रूपक तथा गाथा में पुनरुक्ति, यमक है।

**गाथा १०**—'**दुमं जहा साउफलं व पक्खी**' जैसे स्वादु फल वाले वृक्ष को पक्षी उत्पीडित करते हैं वैसे ही—'**दित्तं च कामा समभिद्दवन्ति**' विषयासक्त मनुष्य को काम उत्पीडित करता है। उदाहरण तथा '**रसा**' शब्द दो बार आने से यमक।

धम्मो दीवो
संसार समुद्र में धर्म ही दीप है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

**गाथा ११—'जहा दवग्गी पउरिन्धणे वणे, समारुओ नोवसमं उवेइ।**
**एविन्दियग्गी वि पगामभोइणो,.......................... ॥**

जैसे प्रचंड पवन के साथ प्रचुर इन्धनवाले वन में लगा दावानल शान्त नहीं होता है उसी प्रकार प्रकामभोजी/यथेच्छ भोजन करनेवाले की इन्द्रिय-अग्नि (वासना) शांत नहीं होती है। इसमें उदाहरण तथा **'एविन्दियग्गी'** इन्द्रिय-अग्नि में रूपक है।

**गाथा १३—'जहा बिरालावसहस्स मूले, न मूसगाणं वसही पसत्था।**
**एमेव इत्थीनिलयस्स मज्झे, न बम्भयारिस्स खमो निवासो ॥'**

—जिस प्रकार बिडालों के निवासस्थान के पास चूहों का रहना हितकर नहीं है वैसे ही स्त्रियों के निवास स्थान के पास ब्रह्मचारी का रहना भी हितकर नहीं है। उदाहरण है।

**गाथा १७—'जहित्थिओ बालमणोहराओ'**—अज्ञानियों के मन को हरण करने वाली स्त्रियाँ जितनी दुस्तर हैं धर्म में स्थित मनुष्य के लिए लोक में अन्य कुछ दुस्तर नहीं है। उदाहरण तथा **'मोक्खाभिकंखिस्स वि माणवस्स'** में छेकानुप्रास है।

**गाथा १८—'जहा महासागरमुत्तरित्ता, नई भवे अवि गंगासमाणा'**

जैसे महासागर तैरने के बाद गंगा जैसी नदियों को तैरना आसान है वैसे ही स्त्री-विषयक संसर्गों का सम्यक् अतिक्रमण करने पर शेष संबंधों का अतिक्रमण सुखोत्तर हो जाता है। इसमें उदाहरण है।

**गाथा २०—'जहा य किंपाकफला मणोरमा, रसेण वण्णेण य भुज्जमाणा।**
**ते खुड्डए जीविय पच्चमाणा, एओवमा कामगुणा विवागे ॥'**

जैसे किंपाक फल रस और रूप-रंग की दृष्टि से देखने और खाने में मनोरम हैं किन्तु परिणाम में जीवन का अन्त कर देते हैं वैसे ही कामगुण भी अन्तिम परिणाम में ऐसे ही होते हैं। इसमें उदाहरण भी तथा उपमा भी (एओवमा)।

**गाथा २४-३७-५०-६३-७६-८९—'....जह वा पयंगे, आलोयलीले समुवेइ मच्चुं।'२४'**

—जैसे प्रकाश लोलुप पतंगा प्रकाश-रूप में आसक्त होकर मृत्यु को प्राप्त होता है।

**'....हरिणमिगे व मुद्धे, सद्दे अतित्ते समुवेइ मच्चुं।' ३७।**

—जैसे शब्द में अतृप्त/मुग्ध हरिण मृत्यु को प्राप्त होता है।

**'....ओसहिगन्धगिद्धे, सप्पे बिलाओ विव निक्खमन्ते'। ५०।**

—जैसे ओषधि की गंध में आसक्त रागानुरक्त सर्प बिल से निकल कर विनाश को प्राप्त होता है।

**'मच्छे जहा आमिसभोगगिद्धे'। ६३।**

—जैसे मांस खाने में आसक्त रागातुर मत्स्य कांटे से बींधा जाता है।

**'....सीयजलावसन्ने गाहग्गहीए महिसे वऽरन्ने।७६।**

—जैसे वन में जलाशय के शीतल स्पर्श में आसक्त रागातुर भैंसा मगर के द्वारा पकड़ा जाता है।

**'....कामगुणेसु गिद्धे, करेणुमग्गावहिए व नागे'। ८९।**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

—जैसे हथिनी के प्रति आकृष्ट, कामगुणों में आसक्त रागातुर हाथी विनाश को प्राप्त होता है।

इसी प्रकार रूप, शब्द, गंध, रस, तथा स्पर्श भोगों में आसक्त जीव भी विनाश को प्राप्त होता है। इन सबमें उदाहरण है।

**गाथा**—३४-४७-६०-७३-८६-९९—'**न लिप्पइ भवमज्झे वि सन्तो, जलेण वा पोक्खरिणीपलासं**।'

इन्द्रियविषयों एवं भाव में जो मनुष्य शोक-रहित होता है वह संसार में रहता हुआ भी लिप्त नहीं होता है, जैसे—जलाशय में कमल का पत्ता जल से अलिप्त रहता है। इन गाथाओं में भी उदाहरण है।

**गाथा** १०४—'**इन्दियचोरवस्से**'—इन्द्रिय रूपी चोर। रूपक।

'**वियारे—अमियप्पयारे**।'······ छेकानुप्रास।

**अध्ययन ३४—गाथा** ४—इसमें कृष्णलेश्या के वर्ण स्निग्ध अर्थात् सजल मेघ, महिष शृंग, अरिष्टक, खंजन, अंजन और नेत्र तारिका के समान काला बताया है। अतः उपमा है। '**नयण**' शब्द दो बार आया, अतः यमक भी है।

**गाथा** ५—इसमें नीललेश्या का वर्ण—नील अशोक वृक्ष, चासपक्षी के पंख और स्निग्ध वैडूर्यमणि के समान नीला बताया है, अतः उपमा है।

**गाथा** ६—इसमें कापोतलेश्या को अलसी के फूल, कोयल के पंख और कबूतर की ग्रीवा के वर्ण के समान कुछ काला और कुछ लाल जैसा मिश्रित बताया है। उपमा है।

**गाथा** ७—इसमें तेजोलेश्या का वर्ण हिंगुल, धातु-गेरु, उदीयमान तरुण सूर्य, तोते की चोंच, प्रदीप की लौ के समान लाल बताया है। अतः उपमा है।

**गाथा** ८—इसमें पद्मलेश्या का वर्ण—हरिताल और हल्दी के खण्ड तथा सण और असन के फूल के समान पीला बताया है। उपमा है।

**गाथा** ९—शुक्ललेश्या का वर्ण—शंख, अंकरत्न (स्फटिक जैसा श्वेत रत्नविशेष) कुंद पुष्प, दुग्धधारा, चाँदी के हार के समान श्वेत बताया है, अतः उपमा है।

**गाथा** १०—कृष्णलेश्या का रस वैसा ही कड़ुवा है जैसा तूम्बा, नीम, कड़वी रोहिणी का रस कड़ुवा होता है। अतः उदाहरण है। तथा '**कडुय**' शब्द दो बार इसलिए यमक है और '**कडुयतुम्बगरसो निंबरसो**' में छेकानुप्रास है।

**गाथा** ११—नीललेश्या का रस वैसा ही तीखा होता है जैसा त्रिकटु और गजपीपल का रस होता है। अतः उदाहरण एवं '**रसो**' शब्द दो बार, अतः यमक भी है।

**गाथा** १२—कापोतलेश्या का रस कसैला होता है जैसा कच्चे आम और कच्चे कपित्थ का होता है। अतः उदाहरण तथा '**रसो**' शब्द दो बार आया है, अतः **यमक** है।

**गाथा** १३—तेजोलेश्या का रस वैसा ही खट-मीठा होता है जैसा पके हुए आम और पके हुए कपित्थ का रस होता है। इसमें भी उदाहरण और '**रसो**' शब्द दो बार आया है, अतः यमक भी है।

धम्मो दीवो
संसार समुद्र में धर्म ही दीप है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

**गाथा १४**—पद्मलेश्या का रस वैसा ही होता है जैसा उत्तम सुरा, फूलों से बने विविध आसव, मधु (मद्यविशेष) तथा मैरेयक का रस अम्ल-कसैला होता है। उदाहरण है तथा **'रसो'** शब्द दो बार आया, अतः यमक है।

**गाथा १५**—शुक्ल लेश्या का रस मीठा होता है जैसा खजूर, दाख, क्षीर, खाँड और शक्कर का रस होता है। उदाहृण तथा **'रसो'** शब्द दो बार वाया है, अतः यमक है।

**गाथा १६-१७**—गाय, कुत्ते और सर्प के मृतक शरीर से जैसी दुर्गन्ध आती है वैसी कृष्ण, नील और कापोतलेश्याओं की गन्ध होती है तथा सुगन्धित पुष्प और पीसे जा रहे सुगन्धित पदार्थों की जैसी गन्ध है वैसी तेजो, पद्म और शुक्ल लेश्याओं की गन्ध होती है। अतः उदाहरण है।

**गाथा १८-१९**—कवच (करवत), गाय की जीभ और शाक वृक्ष के पत्रों का स्पर्श जैसे कर्कश होता है वैसा कृष्ण, नील और कापोत लेश्याओं का स्पर्श होता है। तथा बूर (वनस्पति विशेष), नवनीत, सिरीष के फूल का स्पर्श कोमल होता है वैसा ही तेज, पद्म और शुक्ल-लेश्या का होता है। इनमें भी उदाहरण अलंकार है।

**अध्ययन ३५—गाथा १२—'नत्थि जोइसमे सत्थे'**—अग्नि के समान दूसरा कोई नहीं है। उपमालंकार।

**अध्ययन ३६—गाथा ५७-६०—'ईसीपब्भारनामा उ, पुढवी छत्तसंठिया'**—ईषत्प्राग्भारा नामक पृथ्वी छत्राकार है। रूपकालंकार।

**गाथा ६१—'संखंक-कुंदसंकासा, पण्डुरा निम्मला सुहा'**—शंख, अंकरत्न और कुन्द पुष्प के समान श्वेत/निर्मल और शुभ है। उपमालंकार।

**गाथा ६६—'अउलं सुहं संपत्ता, उवमा जस्स नत्थि'**—जिसकी कोई उपमा नहीं है ऐसा अतुल सुख उन्हें प्राप्त है। **अनुपमेय।**

इस प्रकार क्रमशः ३६ ही अध्ययनों में मेरी अबोध दृष्टिगत जो अलंकार उपलब्ध हुए उनका यहाँ निरूपण किया गया है।

यदि सम्पूर्ण कलात्मक दृष्टि से इस सूत्र पर विचार किया जाये तो निबन्ध के रूप में लिखना अतीव कठिन है। क्योंकि जितना विशद यह सूत्र भावात्मक दृष्टि से है उतना ही विशद इसका कलात्मक परिवेश भी है। अतः केवल अलंकार पक्ष को लेकर यह निबन्ध प्रस्तुत किया गया है। फिर भी निबन्ध काफी विस्तृत हो गया है।

इस निबन्ध को तैयार करने में **'श्री उत्तराध्ययनसूत्र'** पूज्य आचार्य प्रवर श्री आत्मारामजी म. एवं महासती श्री चंदनाजी के द्वारा अनूदित सूत्र का आधार लिया गया है। तथा अलंकारों के लिए **संक्षिप्त अलंकार मंजरी'** (ले. सेठ कन्हैयालाल पोद्दार) का सहारा लिया है।

प्रस्तुत निबन्ध में भूल होने की संभावना हो सकती है। अतः उसके लिये मैं उत्तरदायी हूँ। वीतराग-वाणी का कलात्मक दृष्टि से मनन करते हुए यदि आशातना हुई हो तो **'मिच्छा मि-दुक्कडं।'**

**—मालवकेसरी पूज्य श्री सौभाग्यमलजी के शिष्य**

□□

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org